7

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की समस्याओं के निराकरण हेतु प्रारंभिक देखभाल तथा निदान

भारती शर्मा*

सारांश

बाल्यावस्था के प्रारंभिक चरणों में 'प्रारंभिक देखभाल तथा निदान' से तात्पर्य उन सेवाओं या कार्यक्रमों से है, जिसमें जन्म से 3 वर्ष तक की आयु के शिशु के "विकासात्मक विलंब" या "खतरे" के निराकरण हेतु लक्ष्यों का निर्धारण तथा क्रियान्वयन कर परिणाम प्राप्त करना होता है। यह विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए अति महत्वपूर्ण है।

'प्रारंभिक देखभाल तथा निदान' द्वारा विशेष बच्चों की वर्तमान तथा भविष्य में आने वाली जटिल समस्याओं का निदान संभव है।

दिव्यांगता की सामाजिक ज़िम्मेदारी या समझ स्वीकार करते हुए, इससे उत्पन्न समस्याओं का निराकरण कर विशेष बच्चों को आत्मनिर्भर बनाना अगला चरण है। *दिव्यांगता जन अधिकार अधिनियम — 2016* में बच्चों की प्रारंभिक देखभाल तथा निदान हेतु सर्वेक्षण तथा खोज कराना, कारण तथा उपायों की जानकारी, 'विकासात्मक खतरों' की पहचान, मानव संसाधन प्रशिक्षण सुविधाएँ, जन-जागरण कार्यक्रम इत्यादि शामिल हैं। यही नहीं *दिव्यांगता जन अधिकार अधिनियम (2016)* में 21 प्रकार की दिव्यांगता को शामिल करना भी एक सराहनीय प्रयास है, जिससे अधिक से अधिक दिव्यांग व्यक्तियों हेतु सार्थक प्रयास एवं सुविधाएँ उपलब्ध कराई जा सकेंगी। विभिन्न संवैधानिक तथा राष्ट्रीय नीतियों में प्रारंभिक देखभाल तथा निदान पर बल दिया गया है। हालाँकि, यथार्थ में क्रियान्वयन हेतु ठोस प्रयास कहीं नज़र नहीं आते। वर्तमान में मानव संसाधानों, उपकरणों, प्रशिक्षण, जानकारी इत्यादि के अभाव में विशेष बच्चों की बड़ी जनसंख्या 'वंचित वर्ग' में ही आती है। हालाँकि, *दिव्यांगता जन अधिकार अधिनियम — 2016* के क्रियान्वयन

* *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर,* शिक्षक शिक्षा एवं अनौपचारिक शिक्षा (अग्रणी शिक्षा में अध्ययन संस्थान) विभाग, शिक्षा संकाय, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नयी दिल्ली

के पश्चात् परिस्थितियों में शनै:शनै: सकारात्मक बदलाव आने की उम्मीद है। प्रस्तुत लेख में विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों की वर्तमान स्थिति, नीतिगत पहलू, प्रारंभिक देखभाल तथा निदान का अर्थ, आवश्यकता, समस्याएँ तथा निदान पर चर्चा की गई है।

मुख्य संप्रत्यय—विशेष आवश्यकता वाले बच्चे (Children with Special Needs — CWSN), प्रारंभिक देखभाल तथा निदान (Early Child Care and Intervention — ECCI), विकासात्मक विलंब, विकासात्मक खतरे, मातृत्व किट या बक्सा।

प्रस्तावना

यूँ तो मानव शरीर गर्भ में स्थापित होने से लेकर मृत्यु तक विकास की विभिन्न दशाओं से होकर गुज़रता है और जीवन के प्रत्येक पड़ाव में होने वाले परिवर्तनों का अपना महत्त्व है। परंतु बाल्यकाल का पूर्व समय, जब एक नन्हा-सा जीव अपने पोषण, देखभाल तथा सुरक्षा हेतु पूर्ण रूप से दूसरों पर आश्रित होता है तथा प्राप्त अनुभवों के उसके सकल जीवन पर दूरगामी परिणाम हों तो यह समय या पड़ाव अत्यंत महत्वपूर्ण तथा विशेष हो जाता है। वृद्धि तथा विकास के क्रमों से गुज़रते हुए वह परिपक्वता धारण करता है। वृद्धि, परिवर्तन की एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें परिमाणात्मक परिवर्तन होते हैं; जैसे — लंबाई, भार इत्यादि का बढ़ना। बच्चे की आयु बढ़ने के साथ-साथ विभिन्न आंतरिक तथा बाहरी अंगों की संरचना में भी वृद्धि होती है जिसे मापा भी जा सकता है। विकास जीवनपर्यंत चलने वाली क्रमिक संबद्धतापूर्ण परिवर्तनों की प्रक्रिया है। हरलॉक (2002) के अनुसार, विकास का अर्थ मात्रात्मक एवं गुणात्मक परिवर्तनों से है। यह परिवर्तन अग्रोन्मुख होते हैं। बच्चा इन प्रगतिपूर्ण परिवर्तनों द्वारा एक शिशु से वयस्क का रूप धारण करता है। तथा विभिन्न कार्यों में दक्षता प्राप्त करता है; जैसे — उठना, बैठना, चलना, बोलना इत्यादि। बच्चे में वृद्धि तथा विकास साथ-साथ होता है। विभिन्न प्रकार के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा भावात्मक परिवर्तन तथा सकारात्मक और नकारात्मक अनुभवों द्वारा व्यक्तित्व निर्माण होता है, जो व्यवहार को संपादित करने का कार्य करते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार *'संपूर्ण विकास हेतु बाल्यावस्था के पूर्व का समय एक महत्वपूर्ण पड़ाव है।'* अधिगम तथा कौशल विकास से बच्चे वातावरणीय तथा अन्य चुनौतियों; जैसे — स्वास्थ्य, पोषण, दिव्यांगता इत्यादि का सामना करने हेतु तैयार होते हैं। सामान्य क्रम में विभिन्न विकासात्मक प्रतिमानों को प्राप्त न कर पाना या देरी से प्राप्त करना जैसी समस्याओं को प्रारंभिक स्तर पर ही कम करना उचित होता है। "सामयिक पहचान तथा निदान" द्वारा विभिन्न "विकासात्मक खतरों" तथा "विलंब" से निपट कर बच्चों की आवश्यकताओं पर ध्यान देकर दिव्यांगता की समस्या को कम किया जा सकता है। *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005)* में कहा गया है कि "विकलांगता समाज द्वारा निर्मित है, इसे तोड़ें।" विकलांगता एक समाजिक ज़िम्मेदारी है इसे स्वीकार करना है। यह सत्य है कि दिव्यांगता की स्थिति में बच्चे को स्वीकार कर उसकी विशेष आवश्यकताओं पर ध्यान देना आवश्यक है, जिसमें

Chapters- PS-April 2016.indd 40 27-07-2017 PM 12:52:00

परिवार, समाज तथा सरकार की भूमिका अग्रणी है। यह आवश्यक है कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की "सामयिक पहचान तथा निदान हो", प्रशिक्षित तथा योग्य विशेष शिक्षक हों, उपकरणों की सुविधा हो, आर्थिक सहायता, आवागमन के साधन इत्यादि सुलभ कराए जाएँ।

भारत में दिव्यांगता की स्थिति

भारतीय जनगणना 2011 के अनुसार भारत में कुल दिव्यांगता दर 2.21 प्रतिशत है, जिसमें पुरुष तथा महिलाओं का प्रतिशत क्रमश: 2.41 प्रतिशत तथा 2.01 प्रतिशत है। जम्मू-कश्मीर, सिक्किम, महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश तथा उड़ीसा में दिव्यांगता का प्रतिशत अन्य राज्यों की अपेक्षा अधिक है (2.5 प्रतिशत)।

भारत में 0–6 वर्ष आयुवर्ग में बच्चों की कुल संख्या 164.48 मिलियन है। इसी आयु समूह में दिव्यांगता के प्रकार, लिंग तथा आवासीय के आधार पर भारतीय जनगणना 2011 के अनुसार कुल संख्या 2042887 है, जिसमें पुरुषों तथा महिलाओं का वितरण क्रमश: 1104559 तथा 938328 है।

ग्रामीण क्षेत्रों में यह संख्या 1452303 है। पुरुष वर्ग की संख्या 785922 तथा महिला वर्ग की संख्या 666381 है। शहरी क्षेत्रों की बात करें तो यह संख्या कुल 590584 है, जिसमें पुरुष तथा महिला वर्ग की संख्या 318637 तथा 271747 है।

भारत में जनगणना 2001 में पाँच प्रकार की दिव्यांगता संबंधी समस्याओं को सूचीबद्ध कर प्रदत्तों का संकलन किया गया था। तत्पश्चात् 2011 में 8 प्रकार की दिव्यांगता संबंधी समस्याओं को सूचीबद्ध किया गया, जिसके कारण कुछ सीमा तक आँकड़ों को बेहतर ढंग से प्रस्तुत किया गया। यह दिव्यांगता श्रेणी थी — दृष्टिबाधिता, श्रवणबाधिता, मंद दिखना, मानसिक मंदता, मानसिक रोग, शारीरिक/चालक बाधिता, उपचारित कुष्ठ तथा मल्टीपल डिसेबिलिटीज़।

हाल ही में दिसंबर 2016 में लोकसभा द्वारा पारित *दिव्यांगता जन (समान अवसर, अधिकारों का संरक्षण तथा पूर्ण भागीदारी) अधिनियम — 1995* बिल में 21 प्रकार की दिव्यांगता को समाहित किया गया है। यह एक सकारात्मक कदम है, जिससे दिव्यांगता सेवाओं में काफ़ी फेर-बदल होगा तथा अधिक से अधिक दिव्यांग जन लाभान्वित हो सकेंगे।

निश्चित रूप से जीवन की अनुमानित आयु में वृद्धि के कारण दिव्यांग जनसंख्या में भी वृद्धि हुई है। 11वीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) के पूर्ववत् योजना आयोग ने जो कि आज नीति आयोग कहलाता है, दिव्यांगता जनसंख्या दर 5–6 प्रतिशत दर्शायी थी।

अतः हम यह कह सकते हैं कि *विकलांगता जन अधिकार अधिनियम बिल — 2016* के परित होने के बाद हम विशेष सकारात्मक परिवर्तनों के लिए आशान्वित हैं, परंतु बदलाव भी अपेक्षित हैं।

विशेष बच्चों के संबंध में संवैधानिक तथा नीतिगत पहलू

भारत में 86वें संवैधानिक संशोधन द्वारा पारित अनुच्छेद 21A के तहत 6–14 वर्ष के आयु के बच्चों के लिए नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान है। अनुच्छेद 45 में कहा गया है कि राज्यों को सभी

Chapters- PS-April 2016.indd 41 27-07-2017 PM 12:52:00

बच्चों के लिए बाल्यावस्था पूर्व देखभाल तथा शिक्षा उपलब्ध कराने को प्रेरित करना है जब तक कि वे 6 वर्ष की आयु प्राप्त न कर लें।

नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम — 2010 बच्चों के लिए गुणवत्तापूर्ण प्राथमिक शिक्षा सुनिश्चित करता है। 12वीं पंचवर्षीय योजना ने बाल्यावस्था पूर्व शिक्षा (ECE) को स्वीकारते हुए विद्यालयी शिक्षा की तैयारी पर बल दिया।

भारत सरकार ने राष्ट्रीय बाल्यावस्था पूर्व देखभाल तथा शिक्षा नीति (ECCE) 2013 को लागू किया, जिसमें *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा तथा गुणवत्ता के विभिन्न मानकों* को शामिल किया गया है। यह नीति 6 वर्ष तक के सभी बच्चों हेतु गुणवत्तापूर्ण बाल्यावस्था पूर्व शिक्षा की व्यापक उपलब्धता को सुलभ कराने की बात करती है।

दिव्यांग जन (समान अवसर, अधिकारों का संरक्षण तथा पूर्व भागीदारी) अधिनियम — 1995 में दिव्यांगता की रोकथाम तथा प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान की सेवाओं की उपलब्धता की बात कही गयी है। *राष्ट्रीय ट्रस्ट अधिनियम (1992),* में ऑटिज़्म, मानसिक मंदता तथा कई प्रकार की दिव्यांगता वाले बच्चों के कल्याण तथा प्रारंभिक देखभाल तथा निदान हेतु योजनाओं के निर्माण तथा क्रियान्वयन का प्रबंधन है। भारतीय पुनर्वास परिषद् (1992) के गठन के उपरांत प्रारंभिक देखभाल तथा निदान विषय पर अधिक ध्यान दिया गया। हाल ही में पारित *दिव्यांग जन अधिकार अधिनियम — 2016* में अग्रलिखित बातें कही गयी हैं —

- दिव्यांगता के होने के कारणों को जानने हेतु सर्वेक्षण, खोज तथा अनुसंधान करवाए जाएँ।
- दिव्यांगता से बचाव हेतु उपायों को बढ़ावा दें।
- कम से कम वर्ष में एक बार विकासात्मक खतरे में ग्रसित बच्चों की पहचान करना।
- प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में स्टॉफ के प्रशिक्षण हेतु सुविधाएँ प्रदान करना।
- स्वास्थ्य, स्वच्छता तथा सफ़ाई की जानकारी प्रदान करने हेतु जन-जागरण अभियान को सहायता प्रदान करना।
- माता तथा बच्चों की जन्म से पूर्व, जन्म के समय तथा जन्म के बाद देखभाल के उपाय करना।
- पूर्व-विद्यालय, विद्यालयी तथा स्वास्थ्य केंद्रों, ग्रामीण स्तर के कार्यकर्ता तथा आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के माध्यम से जनता को शिक्षित करना।
- इलेक्ट्रॉनिक माध्यम; जैसे — टी.वी., रेडियो इत्यादि के द्वारा दिव्यांगता के कारण तथा बचाव के उपायों की जानकारी आम जनता तक पहुँचाना।
- 'खतरों' की स्थिति में तथा प्राकृतिक आपदा के समय स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध कराना।
- आपातकालीन स्थिति में जीवन बचाने हेतु रोकथाम तथा उपचार प्राक्रियाओं जैसी आवश्यक स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध कराना।
- दिव्यांग महिलाओं के लिए विशेष रूप से सेक्स तथा प्रजनन संबंधी देखभाल के लिए स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध कराना।

Chapters- PS-April 2016.indd 42 27-07-2017 PM 12:52:00

भारत में संवैधानिक तथा नीतिगत प्रावधान होने के उपरांत भी प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान सेवाएँ उपलब्ध नही हैं। यदि हैं भी तो न के बराबर।

केंद्र द्वारा संचालित समेकित बाल विकास सेवाएँ (ICDS) कार्यक्रम में लगभग 38 मिलियन बच्चों तक आँगनवाड़ी तंत्र द्वारा स्वास्थ्य, विद्यालयी पूर्व शिक्षा, पूरक पोषण, प्रतिरक्षा कार्यक्रम तथा रेफ़रल सेवाएँ उपलब्ध करायी जाती हैं। हालाँकि, गर्भावस्था में महिलाओं का पंजीकरण कर आवश्यक दवाओं की उपलब्धता, परामर्श तथा अन्य सेवाएँ दिव्यांगता की रोकथाम में सहायक हैं। परंतु 'सामयिक पहचान तथा निदान' जैसी सेवाओं का सर्वदा अभाव ही है।

कई प्रकार के गैर-सरकारी संगठन ये सेवाएँ प्रदान करने का दावा तो करते हैं, परंतु यथास्थिति बिल्कुल उलट है। अधिकतर संस्थाएँ विशेष शिक्षा तथा पुनर्वास सेवाएँ ही उपलब्ध करा पाती हैं। यही नहीं क्षेत्र विशेष में प्रशिक्षित जन संसाधन का भारी अभाव है। अस्पतालों में जाँच इत्यादि की सुविधाओं पर आश्रित रहना ही एक उपाय रह जाता है जबकि प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान की सुविधाएँ लगभग न के बराबर हैं। जानकारी का अभाव, अनुसंधानों की कमी, संसाधनों की कमी, गरीबी, नकारात्मक अभिवृत्ति इत्यादि कुछ अन्य कारण हैं जिनकी वजह से नीतियों को लागू करना कठिन-सा प्रतीत होता है।

विशेष बच्चों को औपचारिक शिक्षा में भी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। विकासात्मक विलंब के कारण वे अपनी उम्र के सहपाठियों के अनुरूप कार्य न कर पाने की वजह से पिछड़ जाते हैं तथा धीरे-धीरे विद्यालयी शिक्षा की उदासीनता उन्हें असफ़लता की ओर ले जाते हुए, स्कूल छोड़ने का कारण बनती है। गांधी जी के अनुसार *''वास्तविक शिक्षा तो माता के गर्भ में ही प्रारंभ हो जाती है, जब माता बच्चे की ज़िम्मेदारी उठाना आरंभ करती है।''*

यह बात सत्य है इसलिए गर्भावस्था के 280 दिनों से लेकर, बच्चे के पालन-पोषण, शिक्षा इत्यादि को हमें गंभीरता से लेना चाहिए। औपचारिक शिक्षा भी अब आवश्यकता अनुरूप बदलाव की राह पर है। शिक्षा के क्षेत्र में अब हम समावेशी शिक्षा की बात करते हैं।

समावेशन की नीति को हर स्कूल और सारी शिक्षा व्यवस्था में व्यापक रूप से लागू किए जाने की ज़रूरत है । बच्चे के जीवन के हर क्षेत्र में वह चाहे स्कूल में हो या बाहर, सभी में बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित किए जाने की ज़रूरत है। स्कूलों को ऐसे केंद्र बनाए जाने की आवश्यकता है जहाँ बच्चों को जीवन की तैयारी कराई जाए और यह सुनिश्चित किया जाए कि सभी बच्चों को मुख्यत: समाज के हाशिए पर जीने वाले बच्चों और कठिन परिस्थितियों में जीने वाले बच्चों को शिक्षा के इस महत्वपूर्ण क्षेत्र के सबसे ज़्यादा फ़ायदे मिलें।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा बहुत जरूरी है। *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा — 2005 (NCF — 2005)* के अनुसार बच्चों की विशेष आवश्यकताओं की पूर्ववत् ही पहचान कर, जीवन

Chapters- PS-April 2016.indd 43 27-07-2017 PM 12:52:00

की चुनौतियों से लड़ने में उनकी मदद करना महत्वपूर्ण है, इसलिए अभिभावकों, देखभाल कर्मियों तथा अन्य हितधारकों को प्रशिक्षित करना, समझाना तथा जानकारी देना अनिवार्य है।

गुरालनिक (1997) के विचार से दिव्यांग या विशेष बच्चों हेतु प्रारंभिक देखभाल तथा निदान स्वभाविक रूप से विशेष शिक्षा से आया है। दिव्यांगता की पूर्व पहचान तत्पश्चात् उचित निदान दिव्यांगता की समस्याओं को और अधिक बढ़ने से रोक सकता है *(राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा — 2005)।*

अंततः हम यह कह सकते हैं कि प्रारंभिक देखभाल तथा निदान अति आवश्यक है तथा विशेष आवश्यकता वाले बच्चों हेतु अपरिहार्य है।

प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान क्या है?

विकासात्मक क्रम में 'पिछड़े' या 'एट रिस्क' बच्चों (0–3) वर्ष हेतु विभिन्न सेवाएँ प्रदान करना प्रारंभिक देखभाल तथा निदान कहलाता है। यह विशेष सेवाएँ बच्चों की विकासात्मक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रदान की जाती हैं।

डन्सट (1996) के अनुसार 'प्रारंभिक बाल देखभाल' तथा 'निदान' शब्द/संप्रत्य का संदर्भ विकास की अवस्थाएँ जैसे — गर्भावस्था, शैशवास्था तथा पूर्व-बाल्यावस्था में बच्चे, अभिभावक तथा परिवार को सहायता तथा विभिन्न प्रकार के अनुभव प्रदान करना है। योजनाबद्ध तरीके से समयानुसार गतिविधियों का चयन तथा क्रियान्वयन करना, पूर्व-निर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप परिणाम प्राप्त करना, विधियों में आवश्यकतानुसार लचीलापन और बच्चे, अभिभावक तथा प्रशिक्षक के बीच समन्वय स्थापित करना इसकी प्रक्रिया का हिस्सा हैं। विकास के प्रत्याशित या अनुमानित क्रम को बदलने हेतु समय के अनुसार व्यवस्थित योजनाबद्ध कार्यक्रम का आरंभ प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान कहलाता है (सिगल, 1972)। इन सेवाओं में स्वास्थ्य, विकासात्मक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा चिकित्सीय सेवाएँ शामिल हैं।

प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान सेवाएँ

प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान मूल रूप से बहुविषयक है, जिसमें कई प्रकार के विशेषज्ञों को एक टीम के रूप में कार्य करने की आवश्यकता होती है। इस टीम में प्रारंभिक शिक्षा शिक्षक, विशेष शिक्षक, भाषा विशेषज्ञ, परामर्शदाता, सह-सहायक इत्यादि आते हैं। टीम के सभी सदस्य आवश्यकतानुरूप आपस में परिचर्चा कर निदान के उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। गतिविधियों में लचीलापन होता है तथा विषयक सीमाओं का कठोरता से पालन करने की आवश्यकता नहीं होती।

बच्चे के साथ व्यक्तिगत स्तर पर कार्य करने हेतु उद्देश्यों का निर्धारण अभिभावकों द्वारा सलाह इत्यादि के बाद ही किया जाता है। प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान कार्यक्रम मुख्यतः तीन प्रकार से आयोजित किया जाता है —

1. पूर्व-बाल्यावस्था निदान केंद्र-आधारित कार्यक्रम,
2. घर-आधारित कार्यक्रम, तथा

Chapters- PS-April 2016.indd 44 27-07-2017 PM 12:52:00

3. मिश्रित कार्यक्रम — मिश्रित कार्यक्रम में केंद्र तथा घर दोनों स्थानों पर आवश्यकतानुसार निदान किया जाता है। उदाहरण के लिए, खिलौनों से खेलना जिसमें माँसपेशीय विकास पर ध्यान दिया जा सके, विभिन्न प्रकार की आवाज़ों तथा रंगों इत्यादि का प्रयोग जिससे संवेदी तंत्र को विकसित किया जा सके। केंद्र-आधारित कार्यक्रमों में विशेष उपकरणों का प्रयोग किया जाता है; जैसे — ध्वनि मापक, जाँच मशीनें, अभ्यास उपकरण इत्यादि।

रॉबिन मैकविलियम (2010) ने प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान हेतु पाँच तत्त्वों का एक मॉडल कार्यक्रम तैयार किया जिसमें ईको-मानचित्र बनाकर परिवार की परिस्थिति को समझना, नियमित साक्षात्कार द्वारा कार्यात्मक आवश्यकताओं का अवलोकन करना शामिल है। मुख्य सेवा प्रदाता द्वारा ही बहु-विषयक सेवाओं का निष्पादन किया जाता है। अभिभावकों की सलाह पर सहायक सेवा की उपलब्धता तथा निदान के माध्यम से बच्चे की देखभाल हेतु परामर्श दिया जाता है। यह सभी सेवाएँ बच्चे के प्राकृतिक वातावरण में तथा परिवारोन्मुख होनी चाहिए, ऐसा बताया गया है।

यूँ तो ये सेवाएँ विकासात्मक प्रतिमानों के 'विलंब' या 'खतरा' होने पर पुनः सामान्य विकास की गति को प्राप्त करने के लिए दी जाती हैं। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों हेतु क्रियात्मक पक्ष का विशेष ध्यान रखा जाता है परंतु बच्चे के साथ व्यक्तिगत कार्यक्रमों के अलावा अन्य प्रकार की सेवाएँ भी इसमें शामिल हैं जो निम्नलिखित हैं —

- स्वास्थ्य तथा पोषण संबंधी जानकारी; जैसे-भोजन से संबंधित समस्याएँ, आदतें, भोजन में वरीयता, भोजन करना, स्वयं भोजन करने का कौशल।
- अभिभावकों के लिए शिक्षा तथा प्रशिक्षण।
- परिवार के लिए जानकारी, समायोजन तथा सहयोग की रणनीतियाँ।
- आवश्यकतानुसार सलाह तथा विशेष तकनीकों का प्रयोग।
- विभिन्न सहायक उपकरणों का प्रयोग करना सीखना।
- शारीरिक तथा व्यवसायिक चिकित्सा में विभिन्न कौशलों का विकास तथा शारीरिक मुद्राएँ।
- विभिन्न सेवाओं में समूह भावना की तरह काम करना तथा समन्वय स्थापित करना।

समस्या तथा निदान

पूर्व-बाल्यावस्था हस्तक्षेप सेवाओं के बेहतर निष्पादन हेतु अभिभावक, परिवार, समाज, प्रशासन तथा सरकार में आपसी समन्वय तथा सहयोग की आवश्यकता होती है। अभिभावक इसकी प्रथम कड़ी हैं। गरीबी, अज्ञानता, अनभिज्ञता, मनोवैज्ञानिक कारणों तथा जानकारी के अभाव में वे सेवाएँ प्राप्त करने में देरी कर देते हैं जिससे समस्या की जटिलता बढ़ जाती है। सेवाओं की उपलब्धता तथा मूल्य भी उनके निर्णयों पर प्रभाव डालते हैं। भारत में प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान की सेवाओं के प्रदाताओं

Chapters- PS-April 2016.indd 45 27-07-2017 PM 12:52:00

की संख्या लगभग न के बराबर है। राष्ट्रीय स्तर के कुछ सरकारी संस्थान; जैसे — राष्ट्रीय दृष्टि विकलांगता संस्थान (एन.आई.वी.एच), राष्ट्रीय मानसिक विकलांगता संस्थान (एन.आई.एम.एच) इत्यादि तथा विभिन्न निजी तथा गैर-सरकारी संस्थान इत्यादि यह सेवाएँ उपलब्ध कराते हैं, परंतु जनसंख्या के अनुपात में यह बेहद कम है।

प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान की प्रक्रिया में नियमित जाँच, नियमित विधियों तथा सहायक सामग्री का प्रयोग, परिणाम, परिणामों पर पुनर्विचार, निश्चित समय सीमा, बहुविषयक टीम के निर्देशों का पालन, मूल्यांकन, अभ्यास, परिस्थितियों से समायोजन, वातावरणीय परिवर्तन, धैर्य, आत्मविश्वास तथा सकारात्मक दृष्टिकोण का होना आवश्यक है। इनमें से किसी एक का भी अभाव निष्पादन की प्रक्रिया को बाधित कर समस्याओं को जन्म देता है।

योजना के प्रबंधन, समन्वय तथा इच्छा शक्ति के अभाव में प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान का कार्यक्रम व्यर्थ हो सकता है जिसके दूरगामी नकारात्मक परिणाम होंगे इसलिए कार्यक्रम की सफलता तथा बेहतर निष्पादन हेतु हमें निम्न पहलुओं पर विचार करना चाहिए —

- नीतियों को प्रयोग में लाना तथा उन पर अमल करना।
- विश्वविद्यालयों तथा कॉलेजों में विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू करना।
- केंद्र तथा राज्य सरकारों द्वारा आर्थिक सहायता, उपकरण तथा अन्य संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
- योजनाओं का निर्माण, क्रियान्वयन, सतत मूल्यांकन तत्पश्चात् प्राप्त प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण करना।
- अनुसंधान पर विशेष ज़ोर देना।
- जागरूकता अभियान चलाना। माता-पिता, परिवार तथा समाज को जागरूक करना।
- सकारात्मक अभिवृत्तियों का विकास करना जिससे लोग दिव्यांगता के विभिन्न पहलुओं को स्वीकार सकें।
- क्षेत्र विशेष के विकास हेतु रोज़गार के स्थायी स्रोत विकसित करना।
- बच्चे के जन्म होने पर बच्चे की देखभाल हेतु नि:शुल्क ''मातृत्व बक्सा या किट'' उपलब्ध कराना जिसमें बच्चे की देखभाल तथा सुरक्षा से संबंधित सभी आवश्यक सामान तथा जानकारी हो।
- बच्चे के स्वास्थ्य, शिक्षा हेतु परिवार को सहायक सेवाएँ उपलब्ध कराना।
- निश्चित समय पर जाँच, स्वास्थ्य सेवाएँ, चिकित्सकीय परामर्श तथा दवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
- प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान केंद्र स्थापित करना जिसमें प्रत्येक बच्चे के विकास के अभिलेख तैयार कर माता-पिता को उचित परामर्श देना।

निष्कर्ष

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों हेतु प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान सेवाओं का विकास तथा संवर्धन आवश्यक है। इसमें विकास के क्रम को

Chapters- PS-April 2016.indd 46 27-07-2017 PM 12:52:01

गतिशीलता प्रदान करना, विकासात्मक प्रतिमानों तक पहुँचने का पुनः प्रयास करना, विभिन्न कौशलों का विकास करना, विषयपरक कौशलों; जैसे — भाषा, विज्ञान, गणित इत्यादि के लिए खास विधियों का चयन करना इत्यादि शामिल हैं।

प्रारंभिक बाल देखभाल तथा निदान कार्यक्रमों में आने वाली समस्याओं को समझ कर निदान करना भी अति आवश्यक है। भारत में इस प्रयोजन हेतु *दिव्यांग जन अधिकार अधिनियम — 2016* एक मील का पत्थर साबित होगा।

संदर्भ

दिव्यांग जन अधिकार अधिनियम — 2016, भारत सरकार, नयी दिल्ली.

बलफोक, अनीता. 2006. *एजुकेशनल साइकोलॉजी*. डोरलिंग. किंडरसले इंडिया. प्राइवेट लिमिटेड, इंडिया.

बर्क,एल.ई. 1996. *चॉइल्ड डेवलपमेंट*. प्रेंटिस हॉल ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली.

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्. 2005. *राष्ट्रीय फ़ोकस समूह का आधार पत्र — विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा — 2005*. नयी दिल्ली.

———. *प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005)*. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली.

———. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005)*. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली.

———. *राष्ट्रीय पूर्व-बाल्यावस्था देखभाल तथा शिक्षा नीति (2013)*. भारत सरकार, नयी दिल्ली.

शुक्ला, आर.पी. 2008. *अर्ली चॉइल्डहुड केयर एंड एजुकेशन*. स्वरूप एंड संस, नयी दिल्ली.

हरलॉक, ई.बी. 2002. *डेवलपमेंटल सायकोलॉजी. चौथा संस्करण*. टाटा मैग्राहिल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली.

www.narendramodi-in/rights of persons-with disabilities bill 2016 - Passed by parliament 25.12.2016 को देखा गया

www.censusindia.gov.in/ disabled population 26.12.2016 को देखा गया

www.indianexpress.com/article, understating disability 25.12.2016 को देखा गया

www.unicef.in/what we do/early childhood education

www.wikipedia.org/wiki/early childhood intervention

www.understood.org 23.11.2016 को देखा गया

www.eciavic.org 23.11.2016 को देखा गया